अर्पणा पुष्पांजलि

जून 2024

इतना बड़ा सौभाग्य मेरा,
संकल्प पिया मैं तुम्हारी हूँ।
तव माया में तव रचना में,
जो हूँ सब ही मैं तुम्हारी हूँ।।

- परम पूज्य माँ
प्रार्थना शास्त्र 1/297
25.1.1960

भक्त हृदय के उद्‌गार

जग वाले अब मुझे जो भी कहें, इनसे अब मुझको क्या होगा।
मुझ को तो चैना तब ही मिले, जब तू ही राम मेरा होगा।।

कुछ ऐसी विधि मिला दे पिया, जग से अब दूर ही रहा करूँ।
तेरे चरणन् में बस बैठ करी, तुझ को ही अब मैं मिला करूँ।।

तुम ही यह रूप धर आये हो, मैं तुमसे ही अब गिला करूँ।
तेरे चरण में बैठ के राम मेरे, तुझ को ही अब मैं मिला करूँ।।

जग की बातें सुन सुन कर, कहीं राह न भूलूँ राम मैं।
जग में जाने से पूर्व ही, तेरे चरणन् छू लूँ राम मैं।।

राम तुझे मैं बिनती करूँ, इक बेरी अब तू सामने आ।
मेरे राम का रूप ही धर करके, अब अपना दरस मुझे दिखला।।

-परम पूज्य माँ
प्रार्थना शास्त्र 1/97
15.08.1959

अनुक्रमणिका

1. भक्त हृदय के उद्‌गार..
जग वाले अब मुझे जो भी कहें..

3. अहं मिटाव का ज्ञान आसान है, पल पल मिट जाना मुश्किल है..!
अर्पणा प्रकाशन - श्रीमद्भगवद्गीता - 'भगवद् बाँसुरी में जीवन धुन' 3/4-6

9. आप ही की उस आवाज़ की ऋणी हूँ माँ, जिसने इसे बुला लिया..
श्रीमती पम्मी महता

12. सत् असत् से परे परम सत्
संकलन - सुश्री छोटे माँ

16. सच्चा मित्र
श्रीमती अनुराधा कपूर

18. चहुँ ओर विस्तृत हुये, 'अरे' एक सों ही उठे हुये..!
मुण्डकोपनिषद्, द्वितीय मुण्डक 2/6

23. अखण्ड ध्यान
प्रस्तुति - विष्णु प्रिया महता

25. जो मन देखा आपुनो..
श्रीमती सत्या महता

28. सत्-असत् विवेक
परम पूज्य माँ से पिताजी के प्रश्नोत्तर

32. उपासना राही शास्त्रों में खोज
डॉ. जे.के. महता

37. अर्पणा समाचार पत्र

सम्पादक की ओर से

गद्य में प्रस्तुत सभी लेख साधकों के प्रश्नों के उत्तर में परम पूज्य माँ द्वारा प्राप्त सत्संगों पर आधारित हैं और संकलन-कर्ता की निजी समझ के अनुकूल हैं। काव्य की पंक्तियाँ पूज्य माँ के मुखारविन्द से प्रवाहित दिव्य प्रवाह का अंश हैं; जिसे सुश्री छोटे माँ ने लेखनीबद्ध किया है। अपनी पूर्ण सामर्थ्य के अनुसार उसे ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुति में किसी भूल के लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं।

सम्पादक : *पूनम मलिक*
सह सम्पादक : *श्रीमती साधना पाल*

पता : अर्पणा आश्रम, मधुबन, करनाल,
132 037, हरियाणा भारत

श्री हरीश्वर दयाल, अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन, करनाल 132 037 01, हरियाणा द्वारा जून 2024 को प्रकाशित

अहं मिटाव का ज्ञान आसान है,
पल पल मिट जाना मुश्किल है!

न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते।
न च संन्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति।।

श्रीमद्भगवद्गीता - 3/4

भगवान कहते हैं कि हे अर्जुन !

शब्दार्थ :

1. **मनुष्य न तो कर्मों को न करने से निष्कर्मता को प्राप्त होता है,**
2. **और न ही सब कुछ छोड़ देने से परम सिद्धि को पाता है।**

तत्व विस्तार :

यहाँ भगवान कर्मों के बारे में स्पष्ट कह रहे हैं कि :

1. कर्म न करने से निष्कर्मता नहीं आती।
2. कर्मों को छोड़ देने से आत्मवान के गुण नहीं आ सकते।
3. कर्मों को छोड़ देने से जीव तनत्व भाव तथा कर्तृत्व भाव से नहीं उठ सकता।
4. कर्मों को छोड़ देने से कर्म से संग का त्याग नहीं होता।
5. कर्मों को छोड़ देने से कामना का त्याग नहीं होता।
6. कर्मों को छोड़ देने से जीव निर्मम नहीं बन सकता।
7. कर्मों को छोड़ देने से जीव निरहंकार नहीं हो सकता।

दूसरी ओर भगवान कहते हैं - संन्यास ले लेने से भी सिद्धि नहीं हो पाती।

क) यानि सब कुछ छोड़ने से सिद्धि नहीं होती।
ख) जग को छोड़ देने से सिद्धि नहीं होती।
ग) नाते बन्धुओं को छोड़ देने से सिद्धि नहीं होती।
घ) केवल सत् ज्ञान के पठन, चिन्तन और ज्ञान में रमण से सिद्धि नहीं होती।
ङ) केवल यह कहने से कि 'मैं आत्मवान हूँ' जीव आत्मवान नहीं बन जाता।
च) केवल यह कह देने से कि 'मैं तन नहीं हूँ' जीव तनत्व भाव से उठ नहीं जाता।

यह कह कर भगवान कहते हैं कि संन्यास और कर्मों का समन्वय अनिवार्य है। संन्यास और कर्म विरोधात्मक नहीं है; बल्कि संन्यास और कर्म के मिलन से सिद्धि होती है।

नन्हीं, इसे यूँ समझ! भगवान ने पहले कहा कि :

1. तू संग करना छोड़ दे।
2. तू कर्मों के फल की चाहना छोड़ दे।
3. तू तनत्व भाव छोड़ दे।
4. तू औरों पर से अपना अधिकार, यानि ममत्व भाव छोड़ दे।
5. तू अपना अहंकार छोड़ दे।
6. तू विषयों का चिन्तन छोड़ दे, विषयों से संग छोड़ दे।

यदि तुझे तनत्व भाव त्याग का अभ्यास करना है तो पूर्ण जग को छोड़ देने से क्या होगा? तुमने तो अपना तन छोड़ना है। तुम वह तन जग को क्यों नहीं दे देते?

क) जब आपका तन, बिना किसी प्रयोजन के लोगों के काम करने लगेगा, तब आप स्वतः निष्काम भाव में स्थिति पा लेंगे।
ख) अपने तन के प्रति आप ज्यों ज्यों उदासीन होने लगेंगे, उसके अनुरूप ही आपकी संन्यास में स्थिति होती जायेगी।
ग) जब विवेक रूपा ज्ञान ने तनत्व भाव के त्याग को आपका लक्ष्य बना ही दिया, तो आप तन के कर्म भी अपनाने बन्द कर दोगे।
घ) तन कर्म तो करता जायेगा, किन्तु साथ ही साथ आप बुद्धि स्तर पर कर्तृत्व भाव अभाव का अभ्यास भी करते जायेंगे।
ङ) जैसी भी परिस्थिति आये, तदनुकूल तन तो कर्म करता जायेगा और आप अपने ज्ञान तथा विवेक के आसरे परिस्थिति से अप्रभावित रहना सीख लेंगे।
च) विभिन्न गुणों वाले लोगों को तो आप नित्य मिलेंगे, किन्तु यदि आप सच ही अपने आपको तन न मानने का अभ्यास कर रहे होंगे तो आप उनके गुणों से अप्रभावित रहेंगे।
छ) गुणातीतता का अभ्यास भी यह ही है। यदि कोई आपकी स्थिति की परवाह नहीं करेगा और आपको तुच्छ से काम में लगा देगा, तब, यदि आप अपने आपको तन न समझते हुए, अपने गुणों का गुमान न रखते हुए, छोटे बड़े सभी काज करोगे, तो आप द्वन्द्वों से भी उठ सकोगे। तब आप अपने गुणों से भी संग छोड़ सकोगे।

यानि, जब तन ही आपका नहीं :

1. तो जग आपके तन से क्या करवाता है, आपको क्या?

2. तो तन के गुणों पर इतराना क्या?
3. तो इससे कोई छोटा काम करवाये या बड़ा काम करवाये, इससे आपको क्या?
4. तो आपके गुण जो भी हों, उन्हें ज़माना सराहे या ठुकराये, आपको क्या?

इसका अभ्यास भी तो जीवन में होना है। भगवान ने यहाँ स्पष्ट कहा है कि कर्म त्याग देने से निष्कर्मता नहीं आती और संन्यास लेने से सिद्धि नहीं मिलती।

मेरी नन्हीं जान्! इसका राज़ तथा समन्वय सिद्धि तुम समझ ही गई होगी।

नन्हीं! यह तुम्हें अजीब तो लगेगा, पर फिर से समझने के प्रयत्न करो, कि :

1. कर्म ही तुम्हें कर्मों से उठा सकते हैं।
2. जिस विषय से तृप्त होना चाहते हो, वह शनैः शनैः दूसरों को दो तो तृप्त हो सकते हो।
3. सुख देने से मिलता है, लेने से नहीं।
4. जब आपका किसी पर अधिकार न रहे और कोई अपना न रहे, तो आप नित्य आनन्द को पाते हैं।
5. नित्य मुक्त सबके नौकर होते हैं, वरना वह नित्य मुक्त नहीं।
6. असाधुता में ही साधुता पलती है, असाधुओं से दूर रह कर गुमान रूप अहंकार बढ़ता है।
7. भगवान जीवन में अति साधारण होते हैं। उन्हें उनके जीवन काल में पहचानना कठिन ही नहीं, बल्कि असम्भव होता है।
8. अतीव दुराचारी भी साधु हो सकता है। यह ज़रूरी नहीं कि तन को इस्तेमाल करने से तन से उठ जाता है; तन दूसरों के लिये इस्तेमाल करो, तो वह आपके लिये निष्प्रयोजन हो जाता है।
9. आत्मवान बनना है, तो आपको युद्ध करना ही पड़ेगा।
10. सबको आज़ाद कर देने में ही आज़ादी है।
11. आज़ादी अपने आप से पानी होती है, दूसरे से नहीं।
12. अपनी विस्मृति ही आत्म स्थिति है।
13. जब आप अपना तन जग को दे दोगे तो आपके तन से आपका निजी प्रयोजन शनैः शनैः ख़त्म होने लगेगा।

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।।

श्रीमद्भगवद्गीता - 3/5

अब भगवान स्वयं बताते हैं कि कर्म त्याग से सिद्धि क्यों नहीं मिलती। वह कहते हैं :

शब्दार्थ :

1. **क्योंकि कोई भी जीव किसी काल में, क्षण मात्र भी,**
2. **बिना कर्म किये नहीं रहता,**
3. **निस्सन्देह, सब ही प्रकृति से उत्पन्न हुए गुणों द्वारा विवश होकर कर्म करते हैं।**

तत्व विस्तार :

भगवान कहते हैं कि एक क्षण भी तो ऐसा नहीं होता जब प्राणी कर्म न करता हो! वह तो हर पल कुछ न कुछ करता ही रहता है।

भगवान ने कहा :

क) प्रकृति ने ही जीव में गुण भर दिये हैं, उनके कारण वह विवश ही कर्म करता रहता है।

ख) जीव लाख रोके अपने आपको, फिर भी वह कर्म तो करेगा ही।

नन्हीं! अपने आपको रोकना भी तो कर्म है। ध्यान लगाना भी तो कर्म है। पठन और मनन भी तो कर्म है। अपनी दिनचर्या के लिये कुछ करना भी तो कर्म है। अपनी तनोव्यवस्था करना भी तो कर्म है।

साधक! मिथ्या त्याग की बातें करना मूर्खता है। संन्यास का अर्थ भी कर्म त्याग नहीं होता।

1. सब त्याग कर जाना आसान है, नित्य सीस झुकाना मुश्किल है।
2. जग दुःखी बनाना आसान है, जग सुखी बनाना मुश्किल है।
3. कर्तव्य छोड़ देना आसान है, कर्तव्य निभाना मुश्किल है।
4. ज्ञान का पाना आसान है, उसकी प्रतिमा बन जाना मुश्किल है।
5. तनो त्याग की बातें करना आसान है, तन दूजे को दे देना मुश्किल है।
6. योग की बातें सुन्दर हैं, परन्तु अपना अस्तित्व मिटाना मुश्किल है।

7. अहं मिटाव का ज्ञान आसान है, पल पल मिट जाना मुश्किल है।
8. नन्हीं! सब छोड़ कर भाग जाना आसान है, सबका बन जाना मुश्किल है।
9. जो बातें यहाँ मुश्किल कहीं, वही योग का परिणाम हैं और वही योग का प्रमाण हैं।

संन्यास केवल बातों की बात नहीं होता, संन्यासी के गुणों का जीवन में प्रमाण चाहिये। उसे गुणातीत होना है, तत्पश्चात् उसमें से दैवी गुणों का प्रादुर्य होगा। उन दोनों में जब परिपक्वता आ जायेगी, तब कहीं स्थितप्रज्ञता आ सकेगी; तब कहीं आत्मवान बन सकोगे। इस सबको पाने के लिये आपको कर्म तो करने ही पड़ेगे और जैसे भगवान ने कहा है 'योगः कर्मसु कौशलम्' यह कर्म कुशलता आप में आ ही जायेगी।

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते।।

श्रीमद्भगवद्गीता - 3/6

नन्हीं! अब आगे सुन, भगवान कहते हैं :

शब्दार्थ :

१. जो विमूढ़ पुरुष कर्मेन्द्रियों को रोक कर,
२. मन से इन्द्रियों के अर्थों को स्मरण करता रहता है,
३. वह मिथ्याचारी कहलाता है।

तत्व विस्तार :

ध्यान से देख नन्हीं! भगवान क्या कहते हैं! कर्मेन्द्रियों को चाहे आप विषय सम्पर्क से रोक लें, किन्तु यदि आपका मन उन विषयों का चिन्तन करता है तो आप मिथ्याचारी हैं, झूठे हैं, कपट करते हैं, दम्भी हैं, बेईमान हैं, दुराचारी हैं। यानि जब तक मन विषयों में है, तब तक

आप भोगी हैं, और जब मन विषयों में नहीं, तब सब भोग करते हुए भी आप भोगी नहीं।

देख नन्हीं! साधक के दृष्टिकोण से लें तो मन ही मन विषयों को याद करना आसक्ति है। फिर इसे तनिक सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो विषय को त्याग कर, त्याग भाव भी भूल जाना चाहिये।

यदि त्याग भाव मन में रह जाये तो यह जान लो कि चित्त अभी शुद्ध नहीं हुआ, संग अभी भी बाकी है, मोह अभी गया नहीं, विषय से मन अभी उठा नहीं। अभी निहित चाहना बाकी है, अभी तुम तृप्त नहीं हुए। वरना त्याग की बात ही नहीं रहती क्योंकि विषय का महत्व ही न रहता।

नन्हीं! विषयों का उपभोग और विषयों से संग वास्तव में मन ही करता है।

मन ही विषयों को पसन्द करके :

1. उनका उपभोग करना चाहता है।
2. मन ही नित्य अतृप्त हो जाता है।
3. मन ही नित्य लोभी बन जाता है।

मन ही विषयों को याद करता है। इन्द्रियाँ याद नहीं करतीं। यदि मन कहीं और लग जाये तो उसे पसन्दीदा विषय ही भूल जाता है। क्यों न कहें, विषयों के न होते हुए भी मन जब कल्पना करके विषय का उपभोग करता है, तो उसने विषय रस का उपभोग तो कर ही लिया, चाहे स्थूल में किसी ने नहीं देखा। तब ऊपर से यदि आप बहुत शरीफ़ आदमी भी दिखें, किन्तु वास्तव में आप नित्य उपभोग करने वाले दुराचारी हैं, बाहर जो शरीफ़ बनते हैं, वह मिथ्याचार है। आप जो अन्दर से नहीं हैं, लोगों को वैसा दिखा कर उन्हें धोखा देते है। इस नाते आप मिथ्याचारी हैं और धोखेबाज़ हैं।

1. जब मन की विषय में रुचि ही नहीं रहती और जब मन ही विषयों में नहीं रहता, तब उस विषय के त्याग की बात ही विस्मृत हो जाती है।

2. ज्यों दुनिया में अनेकों विषय हैं, जिनको आप देख कर भी नहीं देखते, क्योंकि उनमें आपको दिलचस्पी नहीं होती, इसी तरह जो विषय छूट जायेगा, उसकी ओर आपका ध्यान ही नहीं जायेगा। इसलिये भगवान कह रहे हैं कि विषय को छोड़ भी दो, फिर भी यदि आपको उस विषय का ध्यान आता है, यानि आप स्थूल विषय छोड़ देते हैं, किन्तु उसके सूक्ष्म रस का तो मन उपभोग करता है, तब आप मिथ्याचारी हैं।

नन्हीं! संन्यास लिया नहीं जाता, संन्यास हो जाता है। विषय त्याग की बात नहीं होती, भगवान संग त्याग करने के लिये कहते हैं। त्याग किया नहीं जाता, विषय से मन को फेर लिया जाता है। मन हट ही जाता है यदि मन की रुचि बदल जाये।

इसलिये भगवान ने अर्जुन को इन्द्रियों को वश में करने की विधि बताते हुए कहा, 'मत् परा' (12/6) यानि, मुझ में तेरे मन की भक्ति हो, मेरे परायण हो जाओ। यदि मन ही किसी के प्रेम में खो गया, तो आपको विषय भूल ही जायेंगे।

❖ ❖ ❖

आप ही की उस आवाज़ की ऋणी हूँ माँ, जिसने इसे बुला लिया..

श्रीमती पम्मी महता

हे श्री हरि माँ प्रभु जी, अपनी कनीज़ का प्रणाम स्वीकार करें!

हे श्री हरि माँ, अब तो आप ही की मुहब्बत का रंग चढ़ जाये, जो आप ही आप इसे नज़री आयें.. यही लक्ष्य दिया इसे आपने और ख़ुद ही उस मुक़ाम तक ले भी आये।

कहाँ से कहाँ उठा लाये स्वयं ही.. इसे निज चरणन् पर अर्पित व समर्पित आप स्वयं ही कर लीजिये माँ प्रभु जी, तभी तो आपकी मुकम्मलता में आ पाऊँगी। आप से ज़्यादा यह सच कौन जानता है कि 'मैं' जो करेगी, वहाँ 'मैं' पुनः प्रधान हो जायेगी। फिर आप ही बताइये, हे श्री हरि माँ, इसकी बिगड़ी कस बन पायेगी..

आपने इसे वायदा दिया हुआ है कि यह निमानी आपके श्री चरणन् पर पूर्णतया अर्पित व समर्पित हो जाये। इस आपसे पाई असीस को एक पल के लिये भी भूल नहीं पाई.. ज़ाहिर है, आपने इसे भूलने ही नहीं दिया। आपके इस करम के लिये जितना भी शुक्रिया अदा करूँ, कम है!

हे श्री हरि जगद्जननी माँ, कैसे कहूँ.. आज तो दिल की कह कर भी कह नहीं पाती हूँ। शब्द ही नहीं हैं मुझ पे.. निःशब्द हूँ.. कैसे शब्दों में उतार पाऊँ। देखिये न माँ, आज तो ऐसे लगता है पूरी कायनात ही ठहरी हुई है। मेरे समेत सभी आपके दर्शनों से अभिभूत हो रहे हैं.. ईश कृपा का वरदान पूर्ण जगती पा जाये, जो आप ही आपके दर्शनों से धन्य धन्य हो जाये! आमीन।

हे श्री हरि माँ प्रभु जी, जिस तन, मन, बुद्धि व संग, मम, मोह की इतनी कीमत थी कि कहीं और कुछ और भी है, इससे कितनी अनजान थी। आप गर मेरे जीवन में न आते तो क्या होता, आपकी इस कनीज़ का? अज्ञानता व गुमनामियों के अँधरों में भटकते भटकते यह जीवन भी व्यर्थ हो जाता! सच माँ, आपका अनन्त प्यार व जीवन ज्ञान रूपी अनुभवी क़दम न मिलते तो यह जीवन बुझे दीपक की तरह गुमनामियों में भटक जाता.. पता ही नहीं था हे माँ, कि यथार्थता से कैसे व कितनी अनभिज्ञ और कोसों दूर थी मैं..

आप माँ का कोटि कोटि धन्यवाद, जो आप मेरे लिये धरा पर अवतरित हो कर आ गये! यहाँ शुक्रिया बाबा सर (डॉ. जे.के. महता) का भी करना चाहुँगी.. जिनकी पुकार ने आपको यूँ बुला लिया, आरत हो कर! इसी कुल की होने के नाते, मुझे भी आप दिव्य प्रसाद रूप मिल गईं.. आपकी एवं बाबा सर की चरणरज लेते हुये शतः शतः प्रणाम भी करती हूँ और धन्यवाद भी!

..आप अनन्त श्री हरि जगद्जननी के इस जीवन में दर्शन भी मिले!

..रहगुज़र भी मिली!

..उजाले भी मिले!

..ज्योत्सना भी मिली!

..और आप दिव्य विभूति पाद के दिव्य दर्शनों का परम सौभाग्य भी मिला!

..साथ मिली, वह दिव्य दृष्टि जो आपकी लीला का प्रकट उत्सव पल पल हृदय में मनाती चली गई!

अब और भी क्या कहूँ, इसे अपनी रज़ा में लिये चलें। आप ही के जीवन के सौरभ से ख़ुशबुनुमा करते हुये हे करुणाकर, हे कृपालु दयालु नाथ, इसे अपने में ही लिये चलें।

यह सत्य है, आपकी भक्त नहीं हूँ मैं प्रभु जी.. मगर आप ही की उस आवाज़ की ऋणी हूँ माँ, जिसने इसे बुला लिया...

हे माँ, फिर भी ईश कृपा इस क़दर बरसी इस निमानी पर.. आप माँ प्रभु जी की सतत् आपके पाछे चलने की प्रेरणा पा कर व जिज्ञासा भरा चित्त लिये चलने लगी.. क्या सच मैं चली? नहीं न माँ, आप ही चलाकर ले गये। आप ने जो भाव विभोर इस क़दर इसे किया कि उन्हीं भावों में खो कर रह गई..

अद्भुत, अतीव अद्भुत, आपने इसे संयोग दिया.. वियोग में संयोग भर करी हे योगेश्वर, आप शायद ख़ुद भी नहीं जानते कि इस निमानी के लिये आपने क्या से क्या कर दिया! बिन वरे ही आपने इसे वर लिया। आँखे मूँद कर बड़े ही प्यार से जब आपको इस हृदय में देखती हूँ तभी आप व आपकी मुहब्बत की पराकाष्ठा दिखाई देती है। अपने आपको धन्य धन्य हुई देख बार बार आप ही को प्रणाम करती जाती हूँ!

हे परम विभूति पाद, आप ही का पद पूजन करते हुये, आप ही की चरणरज सीस चढ़ाती जाती हूँ.. कैसे अद्भुत व सुन्दर अवसर को देकर आपने पल पल इसे कृतार्थ किया.. हे माँ परमेश्वर, आपने इस माटी को स्पर्श देकर अपना, कैसा सुन्दर खेल रच दिया..

धन्य हैं आप! धन्य धन्य करी इसे इसी से उपराम कर लिया। निज प्रेम वात्सल्य दे देकर इस हृदय को निज से पुष्टित व पल्लवित किया.. छलछला आता है हृदय मेरा, जब आपसे पाये अलौकिक प्रेम व श्रद्धा भक्ति के इस अनूठे व अद्भुत तथा दिव्य आप विभूति पाद का संगम देखती हूँ। इस हृदय पटल पर तो आश्चर्यचकित होई आप ही आपको अपने चहुँ ओर महसूस करती हूँ। यह कल्पना नहीं है, मेरे जीवन को मिली यह आप विभूति पाद की अनुकम्पा है.. आपकी प्रकट लीला का महोत्सव मना रही हूँ।

यह किसी करिश्मे से हे श्री हरि माँ, कम नहीं! मूक बैठी, आप माँ प्रभु जी को ही निहारे चलती हूँ.. आप ही के साक्षित्व में इसी सत्य को तहेदिल से क़बूल करती हूँ भगवन! आप की इस कनीज़ ने कुछ नहीं किया, जो भी हुआ व हो रहा है तथा जो आगे होगा मेरे जीवन में, आप ही आप से हे श्रीवर होगा! जो देखा है व देख रही हूँ, जो आगे देखूँगी.. उसकी कोई मिसाल नहीं, सम्पूर्ण जगती में! आपके इन दिव्य व अलौकिक दर्शनों को सदा सदा के लिये हृदय में सँजो कर आप ही आपको प्रणाम देती हूँ। कैसा दिव्य दर्पण है.. आपने जिसमें मेरे जीवन की सारी सच्चाई कर साक्षात्कार करा दिया!

आप श्री हरि माँ को कनीज़ का शतः शतः प्रणाम! जी चाहता है, आप ही आपको तिलक करते हुये, यही हृदय से प्रार्थना निकले कि आप ही आपकी जय हो! इसमें आप ही विजयी हों, हे जगतपति! आमीन।

आप ही के हुक्म में रह पाऊँ आप ही की हो कर.. हे जगद् गुरु आप ही में विश्राम पा जाऊँ!

हरि ओम् तत्तसत्त

परब्रह्म परमेश्वर तू

आपकी सर्व व्याप्कता को पल पल, हर पल प्रणाम देती हूँ!

हरि ओम् ❖

सत् असत् से परे परम सत्

संकलन-सुश्री छोटे माँ

सत् स्वरूप भगवान साधुगण की पुकार पर जब जन्म लेकर आते हैं, तो वह सत् रूप धारण करके धरती पर अवतरित होते हैं। स्थूल में जो कुछ भी दृष्ट रूप में दृष्टिगोचर होता है, वह सब राम का ही अंश है.. उन्हीं का वंश है। जो कुछ भी प्रकट हुआ है, वह सत् का न्याय है।

इस जग में जिस को जो भी मिला है, वह सब भगवान ने वहाँ पर आप धरा है। किसी में यह ताब नहीं कि वह कुछ भी आप कर सके। सो, स्थूल जग में जो भी दीखता है.. जिसके हम इन्द्रियों राही दर्शन कर सकते हैं, वह भगवान की ही रचना है। राम जी ने स्वयं आप ही न्याय किया, आप ही सारी रचना रची; इस कारण इस पूर्ण जग में उनके बिना एक कण भी नहीं है।

जीव को इसका राज़ तभी समझ आता है जब वह भगवान की पूर्णता को समझ लेता है और जान लेता है कि जिस संसार को वह सच कहता है, वह भगवान का ही प्रकट रूप है।

जब भगवान भक्तों की पुकार पर जन्म ले कर प्रकट होते हैं, तो उस समय यही समझना चाहिये कि अव्यक्त सत् ने व्यक्त रूप धारण किया है! परिस्थिति चाहे जैसी भी आये, वहाँ पर सत्य नहीं छूटता।

वह जन्म लेकर सत् में विचरण करते हैं और सत् में रहते हैं.. इसी कारण हम जैसे जीव उन्हें भगवान कहते हैं। वह साधारण जीवों में साधारण से ही बन कर रहते हैं; इस कारण प्रत्येक जीव, उन्हें अपने अपने दृष्टिकोण से देखता है। कोई उन्हें सत् कहता है और कोई असत् कहता है।

अब देखना यह है कि हम उन्हें किस प्रकार से पहचान सकते हैं? जब वह सत् जन्म लेकर, व्यक्त रूप धर कर प्रकट होते हैं, तो वह कैसे जीते हैं, कैसे उठते हैं, कैसे बैठते हैं, तथा कैसे वर्तते हैं? देखना यह है कि क्या सच ही उन्होंने रूप धरा?

वहाँ पर तो न उनका तन अपना होता है, न मन ही अपना होता है। तो फिर हम कैसे कह सकते हैं कि उनका रूप कैसा है? वास्तविकता तो यह है कि राम का तन तो हो नहीं सकता; वह तन से परे, मन से परे, बुद्धि से परे रहते हैं। जहाँ तक कर्म गति की बात है; तो कर्म उन्हें स्पर्श भी नहीं कर सकते।

उनका जन्म प्रकृति बंधा होता है और उनका तन भी रेखा बंधा जग में विचरण करता है। जग में जो भी परिस्थिति मिलती है, उनके द्वारा वहाँ सत्यता बह जाती है। उनके जीवन में जहाँ पर, जो भी होता है.. तीनों स्तरों पर वह प्रमाण रूप तो होते हैं, परन्तु अपने ही तन, मन, बुद्धि से संग करने वाला तनधारी उन्हें पहचान नहीं पाता।

जब तक अपना तन आँखों के सामने खड़ा है, तब तक सत् दर्शन नहीं हो सकता! इस कारण जग वाले बारम्बार, हर परिस्थिति में, इन्हीं पर दोष लगाते हैं। इसलिए जो भी आक्षेप उन पर लगते हैं, वह सारे असत् के ही तो रूप हैं।

दूसरी ओर, जो उनको पहचान लेता है और उनको सत् कहता है.. वह भी वास्तव में असत् ही है। असत् अपनी ही तुला बना कर सत् को तोलने चला है.. और यदि वह उस तुला पर तुल जायें, तो उसे सत् कह देता है। जो वह स्वयं नहीं कर सकता, यदि दूसरा उसे कर ले, तो वह उसे श्रेष्ठ कह देता है। वास्तव में उसकी तुला तो असत् ही है। अपनी ही तुला पर जो उसे अपने से श्रेष्ठ दीखता है, शनैः शनैः जीवन के प्रमाण से वह उसे सत् अथवा भगवान कहने लगता है।

ऐसे सत् रूप, सत् स्वरूप का तन तथा उसके तनो सम्पर्क अथवा संसार भी रेखा बधित ही हैं। विपरीत अथवा अनुकूल, उन्हें जो कुछ भी जीवन में मिलता है, उसे वह सत् में बदल देते हैं, परन्तु हम यह नहीं समझ सकते कि वह तन से परे हैं। जीते जी तनधारी जीव, उन्हें तनधारी ही मानते हैं। माटी के बुत उनको बुत का मालिक ही मानते हैं।

जब जब सत् का प्राकट्य होता है, तो सिद्धान्त सिद्ध बात यही है कि तुला तो असत् के हाथ होती है। साधारणतया तन के रहते रहते सत् वाले को न कोई मानता है और न कोई पहचानता है।

कुछ एक साधु, एकत्रित हो कर कुछ पल के लिये वहाँ सत्यता की झलक पा कर उनके गुणों का गान तो करते हैं; परन्तु उन गुणों को अपने जीवन में नहीं उतारते।

भगवान ने स्वयं ही तो श्रीमद्भगवद्गीता में कहा है, *"मैं योग माया से आवृत हो कर जन्म लेता हूँ"*

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय संभवाम्यात्ममायया ।। श्रीमद्भगवद्गीता 4/6

अर्थात् - *"मैं, अविनाशी और अजन्मा होने पर भी तथा सब प्राणियों का ईश्वर होने पर भी अपनी प्रकृति को आधीन करके योग माया से प्रकट होता हूँ।"*

तन के रूप में जब हम उनका दर्शन करते हैं तो दर्शन में प्रकृति ही उनका पालन पोषण करती है। जन्म, मृत्यु, जरा, व्याधि भी उसी प्रकार होता है। एक साधारण जीव के समान ही उनका हर अवस्था में विचरण होता है। दर्शन में तो वह साधारण जीव सम ही दर्शाते हैं।

परन्तु याद रहे, यह दर्शन की ही बात है, उस दर्शन से उनका कोई भी नाता नहीं, वह तो सत् व्यवहार का सजीव प्रमाण होते हैं। परिस्थिति जैसी भी आये वह केवल सत् पथ पर ही रहते हैं।

ऐसे रूप को अव्यय और अक्षय कौन कह सकता है? यदि उनके तन को सत् कहें तो तन मृत्युधर्मा है, यदि मन को सत् कहें तो वह भी पूर्णतया दूजे के तदरूप है, यदि बुद्धि को सत् कहें तो वह भी दूजे के स्तर पर उतर कर उसे उठाती है.. तो फिर उनके जन्म का रहस्य क्या है?

उनका जन्म तो पूर्ण की पूर्णता में अंशमात्र का प्राकट्य है। वह अंश उसी अंशी से प्रकट हो, पुनः उसी में मिल जाता है। न तो वह असत् तन रहता है और न ही उसमें से प्रकट हुआ सत् ही रहता है; दोनों का लोप हो जाता है।

सो, यह सत् और असत् की बातें हम जीव के दृष्टिकोण से संकेत रूप में ही समझ सकते हैं। वह प्रमाणित हो कर भी प्रमाण से परे हैं। यदि हम उन को तन बधित कर लेंगे, तो उन्हें पूर्ण कैसे कह पायेंगे? इस कारण कहते हैं, 'दशरथ पुत्र ही राम नहीं, बल्कि जो दशरथ भी स्वयं हैं', वह राम ही हैं। संसार में कोई भी गण ऐसा नहीं, जो वह आप नहीं।

जब वह जन्म लेकर आते हैं, तो जो सम्पर्क में आया, वह उसी में खो जाते हैं। फिर दूसरे की लाज का प्रश्न होता है, वहाँ दूसरे की ही बात होती है, अपनी बात का प्रश्न नहीं.. वह तो सदा दूजे के सुख का ख्याल रखते हैं, उन्हें अपने सुख की याद ही नहीं रहती। वह स्वयं सत् का प्रमाण हैं.. उन्होंने अपने तन और मन को कभी देखा ही नहीं!

यदि इसका राज़ समझ आये, तो पता चलेगा कि जिसे हम सत् कहते हैं वह जीव कोण से कहते हैं। जो बुद्धि का प्रवाह देखते हैं उसको सत् कहते हैं। पूर्ण जीवन में वह जैसे विचरण करता रहा, उसको सत् कहते हैं। देखना यह है कि क्या हम उसे एक तन में बाँध कर सत् कहते हैं, या अव्यय-अक्षर उसी को कहते हैं?

इन दोनों बातों का आपस में मेल नहीं हो सकता। वह तो इन सबसे परे हैं। असत् दर्शन में सत् का प्रमाण नहीं मिल सकता। वह अव्यय और अक्षय तो हैं, परन्तु तन, मन और बुद्धि से उठ कर ही हम उन्हें कुछ कुछ समझ सकते हैं।

तनधारी उन्हें समझ नहीं सकता। तनधारी वह है, जो तन को अपना मानता है। मन वाला वह है जो अपने मन में भ्रमण करता है। बुद्धि अभिमानी वह है जो अपनी बुद्धि से संग करता है और उसे नहीं छोड़ता; अपनी दृष्टि से जग को देखकर उसे वैसा ही मानता है। जो सत्-असत् का राज़ जान लेता है, वह इससे परे हो जाता है। वह जानता है किः

1. सत् का रूप, असत् बधित सा दर्शाता है।
2. कर्मपति साधारण कर्म गति में विचरण करता हुआ सा दर्शाता है।
3. वह प्रेमघन, दृष्ट रूप में महाप्रेमी सा दर्शाता है।
4. वह प्रज्ञानघन होता है और उसकी बुद्धि राही ज्ञान बहता हुआ सा दर्शाता है।

यदि जीव उसे अपने जैसा मान कर अपनी तुला पर तोलने लगे, तो यह बात नहीं बनती। जीव के तो अपने तन, मन और बुद्धि हैं, परन्तु उनका तो अपना कुछ है नहीं।

सर्वप्रथम देखना है कि वह हमारे से भिन्न हैं, कैसे?

1. जो 'मैं' अपने को श्रेष्ठ मानती है वहाँ पर वह 'मैं' ही नहीं।
2. जो मन हम अपना मानते हैं, वह मन वहाँ पर है नहीं।
3. वहाँ पर दृष्ट रूप में तन है, पर 'मेरा तन' वहाँ है नहीं।
4. वहाँ पर बुद्धि तो है, परन्तु 'मेरी बुद्धि' नहीं है।
5. उनका जन्म नहीं हुआ, परन्तु वहाँ पर तन का जन्म तो है।

यह अटपटी भाषा है, जो है भी और नहीं भी है। यदि इस की समझ आ गई.. तो इसका राज़ खुल जायेगा कि वह सत्-असत् से परे हैं।

ऐसे महापुरुष जब साधु पुकार पर जन्म ले कर आते हैं, तो उन्हें पहचानना असम्भव हो जाता है, परन्तु कोई विरला ही, जो अपने तन, मन और बुद्धि से उठ जाता है, उनको पहचान सकता है। ❖

सच्चा मित्र

श्रीमती अनुराधा कपूर

एक बार एक व्यक्ति मौत के किनारे बैठा था, उसे अपने पुराने मित्रों की याद सताने लगी। उसके तीन बहुत घनिष्ठ मित्र थे। उसका अन्तकाल निकट जान कर एक एक करके तीनों मित्र उसके पास आये।

पहले मित्र के पास आते ही वह उससे कहने लगा, 'देख मित्र! मेरा जाने का समय आ गया है। मैं तो इस संसार को छोड़ कर जा रहा हूँ। मैंने उम्र भर वफ़ादारी से तेरा साथ निभाया! सारी उम्र मैंने तुझे अपनी पलकों पर बिठा कर रखा, तेरे संरक्षण के लिए मैंने अपनी जान की भी बाज़ी लगा दी, तेरे आड़े समय में सदा मैंने तेरा साथ दिया।

अब मेरा अन्त समय आ गया है, ऐसे में क्या तू मेरा साथ न देगा? आख़िर तुझे भी तो अपनी दोस्ती का फ़र्ज़ निभाना चाहिये!'

यह सुनते ही उसका मित्र बोला, 'देख मित्र! मैं तेरे इस प्रेम के लिये तेरा बड़ा आभारी हूँ। जीवन में तूने मुझे इतना मान सम्मान दिया, यह तेरा उपकार मैं कभी नहीं भूलूँगा। परन्तु मेरे प्रिय मित्र! तेरा और मेरा साथ विधाता ने यहीं तक लिखा था, मैं इससे आगे तेरे साथ नहीं जा सकता।'

अपने पहले मित्र से निराश होने के उपरान्त उसने अपने दूसरे मित्र पर सारी उम्मीदें रख कर उसको अपने पास बुलाया। उसके फ़र्ज़ का हवाला देते हुए उससे कहा, 'देखो मित्र! मैंने आयु पर्यंत तुम्हारा साथ निभाया है, तुम्हारे हर सुख दुःख में मैं तुम्हारा सांझी रहा हूँ, हर परिस्थिति में मैंने तुम्हें कन्धा दिया है।

अब मेरा अन्तिम समय आ गया है। इस विपत्ति के समय में तुम भी मेरा साथ निभाओ, वरना मैं तो बिलकुल अकेला ही पड़ जाऊँगा।'

उसकी ऐसी बात सुनकर उसका मित्र बड़ी विनम्रता से कहने लगा, 'तू मेरा बहुत प्रिय मित्र है और तुझसे बिछुड़ने का मुझे बहुत दुःख है। तुझे खो देने की सम्भावना से ही मैं व्यथित हूँ। इस बात का मुझे बहुत कष्ट है कि तुम मुझे छोड़े जा रहे हो। परन्तु मेरे प्रिय मित्र! मुझे खेद है कि मैं तुम्हारे साथ नहीं जा सकता। मैं तुम्हारा बहुत आदर मान करता हूँ।

यह प्रमाणित करने के लिये मैं इतना ही कर सकता हूँ कि तुम्हारा अन्तिम संस्कार बहुत सम्मान सहित हो। मैं तुमसे यह वायदा भी करता हूँ कि तुम्हारी सुन्दर तस्वीर अपने घर में लगा कर मैं हर रोज़ उस पर फूल माला भी चढ़ाया करूँगा। मुझ पर किये गए उपकारों के लिए मैं सदा तुमको याद रखूँगा। परन्तु मैं तुम्हारे साथ तुम्हारे इस जीवन काल से आगे नहीं जा सकता।'

अपने दोनों प्रिय मित्रों से हताश हो कर, मृत्यु शैय्या पर पड़े उस व्यक्ति ने अपने तीसरे मित्र को बुलाया। इस समय तक वह समझ चुका था कि कोई उसका साथ नहीं निभाएगा। अपने मित्र का हाथ थाम कर वह रोने लगा और उसको कहने लगा, 'अच्छा मित्र, मैं जाता हूँ अकेला ही। कोई भी मेरा साथ निभाने को तैयार नहीं है, यह मैं जान गया हूँ।

जाओ मित्र! तुम जहाँ भी रहो, सुखी रहो.. मुझे तुमसे कुछ नहीं चाहिए। मैं जानता हूँ मेरा कोई भी सखा इस अवस्था में मेरा सहयोग नहीं देगा। जाओ, मुझे तुमसे कुछ नहीं चाहिए.. तुम भी तो यही कहोगे न कि हमारा साथ यहीं तक था।'

ऐसा सुनकर उसके तीसरे मित्र ने बहुत प्यार से उसका हाथ पकड़ लिया। वह उसको सान्तवना देते हुए कहने लगा, 'प्रिय मित्र! तुम ऐसा क्यों सोचते हो? मैं तो मृत्यु के पश्चात् भी तुम्हारे साथ जाऊँगा। वहीं तो मेरी सच्ची पहचान मिलेगी तुम्हें!'

वास्तव में हम सबके जीवन में यह तीनों मित्र आते हैं, परन्तु हम इनकी सच्चाई को समय पर पहचान नहीं सकते। तात्पर्य यह है कि उसका पहला मित्र था धन, जिसको उसने सदैव अपनी आँखों पर बिठा कर रखा। चाहे जितनी भी मेहनत करके जीव धन का उपार्जन और संरक्षण करे, परन्तु वह जीव के जीवन काल तक ही उसका साथ निभाता है, उसके बाद साथ नहीं जाता।

दूसरा मित्र था परिवार तथा नाते सम्बन्धी, सगे नाते-रिश्ते। वह भी अधिक से अधिक सम्बन्ध निभायेंगे भी, तो इस शरीर के स्वास रहते रहते.. उसके बाद कौन किसका बन्धु?

किन्तु तीसरा मित्र हुआ जीव के अपने संस्कार, उसके अपने पुण्य और पाप कर्म, जो जीवन भर उसने किए हैं। जिन कर्मों को वह आयु पर्यंत संजोता रहा, यही इस शरीर के नष्ट हो जाने पर उसके अगले जन्म में भी उसके साथ जायेंगे।

सो, क्यों न हम भी समय रहते रहते अपने सच्चे मित्रों की परख कर लें, ताकि अन्तकाल में हमें भी उस मरणासन्न व्यक्ति की तरह पछताना न पड़े।❖

चहुँ ओर विस्तृत हुये, पर एक सों ही उठे हुये..

गतांक से आगे..

अरा इव रथनाभौ संहता यत्र नाडय: स एषोऽन्तश्चरते बहुधा जायमान:।
ओमित्येवं ध्यायथ आत्मानं स्वस्ति व: पाराय तमस: परस्तात्।।

मुण्डकोपनिषद् - 2/2/6

अर्थात् - रथ की नाभि में जुड़े हुए; 'अरों' की भाँति जिसमें समस्त देहव्यापिनी नाड़ियाँ एकत्र स्थित हैं; उसी हृदय में बहुत प्रकार से उत्पन्न होने वाला अन्तर्यामी परमेश्वर मध्यभाग में रहता है; इस सर्वात्मा परमात्मा का 'ओम्', इस नाम के द्वारा ही ध्यान करो; अज्ञानमय अंधकार से अतीत तथा भवसागर के अन्तिम तटरूप पुरुषोत्तम की प्राप्ति के लिये साधन करने में तुम लोगों का कल्याण हो।

तत्व विस्तार:

रथ नाभि में 'अरे' हैं ज्यों, एक में रे टिके हुये।
चहुँ ओर विस्तृत हुये, पर एक सों ही उठे हुये।।1।।

नाभि आश्रित 'अरे' रे हैं, वा सहारे रहते हैं।
सम्पूर्ण चक्र रे नाभि के, आसरे ही तो रहते हैं।।2।।

गर नाभि रे नहीं रहे, 'अरे' यह रह न पायेंगे।
इक पल में ही सम्पूर्ण, 'अरे' बिखर रे जायेंगे।।3।।

चक्र 'अरे' जो बनाये थे, वह भी न अब रह सके।
नाभि थामे थी टूट गई, आश्रित चक्र न रह सके।।4।।

उसी विधि पूर्ण तन की, नाड़ी हिय सों रे उठे।
एकत्रित स्थित हिय में है, हिय आसरे तन विचरे।।5।।

रग रग बन तव तन में, संचार वही तो करते हैं।
हृदय ही री आधार है, हिय सों ही उभरते हैं।।6।।

उसी विधि उस परम सों, पूर्ण ब्रह्माण्ड उभरते हैं।
एक सार रे वह ही है, अनेक वहीं सों बनते हैं।।7।।

अविभक्त वह परम तत्व, विभाजित सा रे हो जाये।
कारण सूक्ष्म स्थूल रूप, महा कारण वह हो जाये।।8।।

ओम् ही उसका नाम है, जग ओम् का विस्तार है।
ओम् ही जान ले रे मनवा, परम सत्त्व आधार है।।9।।

त्रिमात्रा ओम् की त्रिपाद, पूर्ण जग दर्शाते हैं।
विराट रूप हिरण्यगर्भ, ईश्वर इसी से आते हैं।।10।।

प्रथम पाद से स्थूल जग, उत्पत्ति सम्पूर्ण आई।
वृक्ष फल जीव जग, विराट रूप पूर्ण आई।।11।।

जागृत कहो बाह्य प्रज्ञ, इन्द्रिय लोक आ गये।
विश्व लोक पृथ्वी लोक, द्रष्टा पूर्ण आ गये।।12।।

बाह्य कर्म तव द्रष्टा कर्म, तमो लोक में आ गये।
पूर्व निश्चित कर्म हैं यह, स्थूल लोक में आ गये।।13।।

महाभूत रे आत्म लोक, भूत लोक रे आ गये।
अधिभूत रूप रे नाम रूप, जड़ शब्द भी आ गये।।14।।

द्वितीय पाद की लो कहें, सूक्ष्म जग की वह कहें।
यह मनो लोक आन्तर लोक, आन्तर प्रज्ञ की लो कहें।।15।।

सम्पूर्ण जग की जानो, स्थिति यहीं पर होती है।
स्थूल जग की मान लो, उत्पत्ति यहीं सों होती है।।16।।

यह ध्यान लोक यह रजो लोक, हिरण्यगर्भ इसे रे कहें।
यही जीव भाव रे तैजस भी, अधियज्ञ कर्म रे ग्रहण करें।।17।।

कर्म यहीं पे होते हैं, भाव लोक रे यह ही है।
महाभूत तन्मात्रा का, शक्ति लोक रे यह ही है ।।18।।

स्वभाव श्रद्धा इसी में करें, भोगी पक्षी यहीं रहे।
ध्यान मग्न रे गर वह है, तो योगी पक्षी यहीं रहे।।19।।

स्वप्न लोक इसको कह लो, कर्म लोक रे यह ही है।
कर्मफल लोक प्रथम पाद, आधुनिक कर्म कर यह ही है।।20।।

लो तृतीय पाद की बात कहें, सुषुप्ति लोक भी उसे कहें।
कारण तन कर्माशय, हृदय लोक भी उसे कहें।।21।।

लय अवस्था वह ही है, मौन अवस्था तुम कह लो।
समाधि अवस्था तुम कहो, आनन्द रूप भी तुम कह लो।।22।।

यह सत्त्व लोक यह द्यु लोक, प्रज्ञा लोक रे यह ही है।
प्रकृति लोक भी यह ही है, ईश्वर लोक भी यह ही है।।23।।

सत्त्व इसे ही कहते हैं, आनन्द लोक भी यह ही है।
भविष्य सूक्ष्म स्थूल का, कारण लोक रे यह ही है।।24।।

समाधि लोक भी इसे कहें, भाव रहित रे लोक यह है।
परम पद की राहों में, सर्वोत्तम री लोक यह है।।25।।

पर यह सब रे मायिक हैं, परम तत्व है रे परे।
अखिल लोक रे वह ही है, परलोक सों बहु परे।।26।।

वह कालातीत है काल परे, गुणातीत गुण न बाँधे।
निर्गुणिया है गुण सों परे, मनोतीत मन न माने।।27।।

अखण्ड रस वह महा मौन, महा कारण रे वह ही है।
अद्वैत तत्व वह परम सत्त्व, अव्यक्त सत्त्व रे वह ही है।।28।।

ओम् उसी का नाम है, त्रिपाद परे पर वह ही है।
नाम उसी का लिया करे, उसकी राह भी वह ही है।।29।।

ध्यान उसी में ही रे रहे, नाम ही सेतु बन जाये।
भव सागर सों तरने का, राम ही सेतु बन जाये।।30।।

कल्याण इसी में है रे कहें, ध्यान मग्न तुम रहा करो।
अन्य सभी को भूल करी, रे नाम मग्न तुम रहा करो।।31।।

अज्ञान परे वह परम पति, उसकी बात रे कहते हैं।
रथ है वह और वही रथी, रथ की गति भी कहते हैं।।32।।

ओम् का ही गर नाम तू ले, ओंकार को जान ले।
पूर्णरूपेण सत्त्व तत्व का, विस्तार तू जान ले।।33।।

अज्ञानमय अन्धकार यह, इससों परे तू हो जाये।
भव सागर मनो सागर से, फिर परे तू हो जाये।।34।।

पथ कहा और देख कहा, निश्चित अमर हो जायेगा।
ओंकार जो जान लिया, ओम् से भी तर जायेगा।।35।।

त्रिपाद ओम् के कह आये, बार बार रे कहते हैं।
ओम् जानी परम पाये, देख पुकार के कहते हैं।।36।।

निश्चित सफल हो जायेगा, परम पद रे पायेगा।
ध्येय मिलन साधक रे, अनिवार्य हो जायेगा।।37।।

त्रिपाद ओम् के जान ले, सूक्ष्म स्थूल कारण की कहें।
किस विध हो यह जग सारा, बाह्य धारण ही वह कहें।।38।।

उत्पत्ति स्थिति लय जाने, तम रज सत्त्व तू जान ले।
गुण गुणन् में वर्त रहे, सार यह पहचान ले।।39।।

संकल्प प्रथम है हो चुका, चक्र रे चलता जाता है।
निश्चित ही विधान है, विधिवत् चलता जाता है।।40।।

पूर्ण ज्ञान रे हो जाये, फिर अखण्ड तत्व को जान ले।
तम त्यजे और रज त्यजे, फिर सत्त्व को भी त्यज आये।।41।।

सत् असत् से परम परे, परम तत्व तू जान ले।
अजर अगोचर सत्त्व स्वरूप, अखण्ड तत्व तू जान ले।।42।।

त्रिकाल अमूर्त काल पति, त्रिकाल मूर्त जान ले।
त्रिकाल दर्शी त्रिकाल रूप, त्रिकाल परे को जान ले।।43।।

अखण्ड रस वह विश्वेश्वर, जगदेश्वर को जान ले।
विश्वात्म वह सर्वात्म, विश्वेश्वर को जान ले।।44।।

ओम् को जो रे जान ले, मनो मल मिट जायेगी।
बुद्धि बुद्धि छोड़ के, परम में टिक जायेगी।।45।।

सत्त्व में जिस पल तू आये, समाधिस्थ हो जायेगा।
मन बुद्धि अरे तन तो यह, वहाँ भी छोड़ के जायेगा।।46।।

नित्य समाधि रहने लगी, तीव्र संवेग आ जाये।
मन रहित समाधि खुले, ऐसा समय भी आ जाये।।47।।

पर ओम् ही विधि है कहते हैं, तुम नाम मग्न ही रहा करो।
तीव्र संवेग सों निरन्तर, राम राम ही कहा करो।।48।।

17-9-61 ❖

अखण्ड ध्यान

प्रस्तुति - विष्णु प्रिया महता

परम पूज्य माँ तो भगवान के प्रेम में ऐसे निमग्न हुए कि अहर्निश भगवान के अतिरिक्त और कोई सुधि रही ही नहीं। उठते बैठते सोते जागते निरन्तर राम ही संग रहते, हर बात में वह अपनी सम्मति देते, हर समस्या में वह ही राह सुझाते.. परन्तु वहाँ भी स्थूल समस्या का तो प्रश्न ही नहीं था।

तन तो विधान बधित पूर्व निर्धारित राह पर चला जा रहा है। जिसने उस तन से ही नाता तोड़ दिया, वह भला उसकी समस्या से क्या प्रभावित होगा? साधक की कठिनाई यदि कोई है, तो उसकी अपने प्रियतम से दूरी! वह तो नित्य इस दूरी को कम करने की राह खोजता रहता है और उसकी इस समस्या का समाधान भी उसके प्रियतम स्वयं करते हैं।

पूज्य माँ के स्वाध्याय एवं ध्यान में भी भगवान स्वयं ही उनका मार्गदर्शन करते, ऐसा आभास स्पष्ट रूप से, उन दिनों की प्रार्थनाओं में मिलता है। अब ऐसे प्रेमी को किसी बाह्य साधना या प्रक्रिया से क्या लेना देना? परन्तु जग वाले उसकी इस अवस्था को भला कैसे समझ सकते हैं?

एक दिन एक सज्जन, जो अपने को बहुत उच्च कोटि का साधक मानते थे.. एवं प्रक्रिया बधित ध्यान का अभ्यास करते थे, पूज्य माँ से मिले। साधन पद्धति पर बात करते हुए वह कुछ इस प्रकार कहने लगे, 'इस प्रकार राम राम करने से क्या लाभ? जब तक आप शास्त्र कथित पद्धति एवं ध्यान प्रक्रिया को नहीं अपनाएँगी, तब तक आपका कुछ नहीं बनेगा।'

उनकी बात सुनकर उस समय तो पूज्य माँ चुप रहे। भक्त अपने आन्तरिक भाव किसी के सम्मुख नहीं धरता। वह तो हर शब्द में अपने प्रियतम का संदेश सुनकर अपनी हर समस्या के समाधान

के लिये प्रियतम की ही शरण में जाता है। सो, मन्दिर में आकर पूज्य माँ ने अपने दिल की बात भगवान जी से कही।

वह कहने लगे, 'हे प्रभु, अब तो तुम निरन्तर मेरे संग रहते हो, फिर यह सन्देश क्यों देते हो कि मैं आँख मूँद कर बैठूँ? क्या मुझसे अपना पीछा छुड़ाना चाहते हो? यदि ध्यान की मुद्रा में आँख बन्द कर के मैं बैठ गई और तुम मेरी इस अवज्ञा से रूठ कर चले गये तो क्या होगा?

जब प्रियतम प्रत्यक्ष हर पल सामने हैं, तो उनका ध्यान धरने के लिये आँखे क्यों मूँदूँ? यदि शास्त्र कथित ध्यान प्रक्रिया का अनुसरण करना अनिवार्य समझते हो, तो चलो, मेरा कर पकड़ कर आगे आगे चलो, नहीं तो मैं तुम्हें छोड़ कर अन्य किसी प्रक्रिया का अनुसरण नहीं करूँगी! मेरा तो बस एक संगी तू ही है- जो सिखाना है, जिस राह पर ले जाना है, प्रत्यक्ष सामने आकर कर मेरा पकड़ कर ले जा मुझे! दूसरों के द्वारा प्रक्रिया की बात न सुना।'

कैसा अद्वितीय भाव है भक्त का! धन्य है भक्त का अपने भगवान से अनन्य सम्बन्ध! इसी भाव का दर्शन है निम्नलिखित प्रवाह में :

कहते हैं तुमको छोड़ के, फिर लौट के आऊँ मैं।
शास्त्र कथित राह सों जाऊँ, तो तुमको पाऊँ मैं।।1।।

गर पीठ करी और लौट पड़ी, तुम रूठ गये और चल दिये।
बहु जन्म में तू अब मिले, फिर जाने राम तू कब मिले।।2।।

यह सोच के भी दिल धड़क रहा, बरसें नयन मन तड़प रहा।
मुझसों पिण्ड छुड़ाने को, यह जाल क्यों न्यारा रच रहा?3।।

नाहिं दर्शन दे ना मुक्ति दे, बस तोरे चरण में चित्त रहे।
जिस राह पे मेरे राम चलें, पद धूलि सों मोरी माँग भरे।।4।।

गर हठ करो तो यह सुन लो, मेरे संग चलो तो जाऊँगी।
मेरा कर पकड़ो और आगे चलो, नहीं लौट के मैं ना जाऊँगी।।5।।

मेरी लग्न उचित या बेढंगी है,पर तेरे नाम से रंगी है।
राह दिखाने ख़ुद आ जा, तू ही इक मेरा संगी है।।6।।

प्रार्थना शास्त्र 1/51
29.3.1959

जो मन देखा आपुनो..

श्रीमती सत्या महता

इनसान इस जहान में आया है, ईश्वर ने उसे यहाँ भेजा है। पिछली सारी रूप-रेखा, सारा कर्मचक्र भुलाकर.. ताकि इस जीवन में यानि मनुष्य योनि में पूरा सुख भोगता हुआ वह तृप्त हो जाए। इस संसार को छोड़ने से पहले वह यह जान जाये कि इस सृष्टि का रचयिता, कर्त्ता, भोक्ता, सब करण-कारण एक ईश्वर ही हैं। यदि मनुष्य इस सत्य को जानना चाहे तो आसानी से इस बात का पता भी चल सकता है।

यदि बुद्धि के तर्क का आसरा लें, तो हमें यह बात स्पष्ट रूप से समझ आ सकती है कि जब हमारा जन्म हुआ..

1. किस घर में जन्म होना है, यह हम जानते भी नहीं थे।
2. हमें लड़का/लड़की का रूप मिलेगा, यह भी हमारी जानकारी से परे था।
3. कैसा रूप रंग होगा, कैसी शक्लोसूरत होगी, हम यह भी नहीं जानते थे।
4. न ही हमारी मर्ज़ी से या हमारे चाहने से ही यह जन्म हुआ है।

शास्त्र कहते हैं कि भगवान ने हमें पूर्ण सुख में ही पैदा किया। बच्चा केवल आनन्द का ही स्वरूप होता है। उसे भगवान ने जीवन भर आनन्द भोगने के लिये ही भेजा है।

परिस्थितियाँ जैसी भी हों, हम आनन्द मे रह सकते हैं। यह आनन्द तो हमारा जन्मसिद्ध अधिकार था। इससे हम कैसे बिछुड़ गए? अब पुनः आनन्द में कैसे जियें? क्यों न जीवन में दृष्टिकोण वैसा बना लें, जैसा शास्त्र कहते हैं, फिर हमें दुःख कभी छू नहीं सकेगा।

शास्त्र कहते हैं कि जीव यह जान ले और मान ले कि मुझे जो भी मिला है, मेरे ही कर्मों का फल मिला है। यदि उसने यह मान लिया तो इससे सन्तुष्ट हो कर वह उसे भोगेगा और उस राही ज्ञान प्राप्त करेगा। फिर वह दूसरे के प्रति ऐसे कर्म कभी नहीं करेगा, जिन कर्मों से उसे ख़ुद को दुःख मिला है।

जीवन में व्यवहार के स्तर पर इसका अर्थ यह हुआ कि प्रतिकूल परिस्थिति में दूसरे को दोष देने की बजाये जीव अपने दोष देख कर उन्हें ठीक करता जायेगा। यानि जब मन में दूसरे के प्रति मैल नहीं होगी तो चित्त भी शुद्ध होता जायेगा।

दूसरे को दोष देने से मन में दूसरे के प्रति जो प्रतिकार झंकार होती थी, वह शान्त होती जायेगी। यानि मन, जो आन्तर में हमेशा कुछ न कुछ बोलता ही रहता है, भड़कता ही रहता है, वह शान्त होने लगेगा। इस मन को मौन करना ही साधना है। जितना जितना मन मौन होता जायेगा, उतना उतना अपने

अन्दर सुख महसूस होगा और उतना ही जीव आत्मा की ओर बढ़ने लगेगा। यह मन ही है जो हमें आत्मा तक पहुँचने नहीं देता, यही हमारी राह में रुकावट है, यही वह आवरण है जो सत्य को हमसे छिपाए हुए है। इस आवरण को दूर करने का ढंग भी यही है कि इसे शान्त किया जाए।

अब समझना यह है कि मन है क्या? मन चाहना पुंज है अर्थात् कामनाओं का एकत्रीकरण! सुख और दुःख भी बाहर से नहीं आते, वह भी मन की ही रचना है। जब बाहर कोई परिस्थिति अथवा कोई इनसान हमारे अनुकूल नहीं होता, तो हमारे मन में प्रतिक्रिया होती है, हम दुःखी हो जाते हैं। यदि इसी परिस्थिति में हम ही दूसरे के अनुकूल हो जायें तो फिर वही परिस्थिति अथवा इनसान सुखमय हो जाता है। रहस्य केवल इतना सा ही है कि हमें अपना दृष्टिकोण बदलना है।

जीवन में ज़रा इसे कर के देखें। हम क्यों नहीं कह सकते, 'दूसरा व्यक्ति मेरी चाहना पूरी नहीं करता, चलो मैं ही उसकी चाहना पूर्ण कर देता हूँ।' और फिर क्यों न कहें, 'वह तो मेरी सहनशक्ति बढ़ाने आया है।' प्रतिकूल परिस्थिति में ही सहनशक्ति बढ़ती है, धैर्य बढ़ता है।

राम जी के जीवन को देखें, वही गुण तो हमें धारण करने हैं राम राम कह कर। सारा जीवन राम राम कह कर राम के गुणों को ही तो अपने जीवन में उतारना है। पूजा, तभी तो सच्ची पूजा बनेगी।

यदि राम राम तो जपते गए, परन्तु उनके गुणों की ओर ध्यान नहीं दिया, तो क्या लाभ? यह देखना ज़रूरी है कि राम किस लिए हमारे पूज्य हैं।

शास्त्रों में कहा है कि जप, अर्थ भावना सहित करना चाहिए, वही जप फलीभूत होता है। इसका जीवन में क्या अर्थ होगा? जैसे भगवान राम का गुण पसन्द है क्षमाशीलता का, तो उसको अपने जीवन में उतारना है.. दिनचर्या में लाना है।

यदि हम भगवान राम को ही देखें, तो माता कैकेयी ने न केवल उनसे उनका राज्य ही ले लिया बल्कि उन्हें 14 वर्ष का बनवास भी दे दिया। इस भयंकर कर्म के प्रति राम जी का क्या दृष्टिकोण था? उन्होंने कहा, 'मेरे तो पुण्य जागृत हो गए! मुझे ऋषि मुनियों की संगत मिलेगी, मेरा भला ही होगा।' राम के मन में अपनी माता के प्रति लेशमात्र भी गिला नहीं था अथवा उस के प्रति दोष की भावना नहीं थी।

इसके बाद जब माता कैकेयी राम को मिलीं तो उनके अपने ही मन का दोष उन्हें खटकने लगा। वह राम जी को कहने लगी, 'तू मुझे मेरे दोष के लिये दण्ड तो दे।' इसके प्रतिरूप में राम जी ने कहा, 'माँ! मैं तो आपको दोषी मानता ही नहीं, मैं तो आपको माँ रूप ही देखता हूँ।'

जो मन क्षमाशील होता है वह तो दूसरे का दोष देखता ही नहीं। फिर दोष देखने से दूसरे का दोष अपने मन में घूमने लगता है। जितनी बार जीव दूसरे का दोष अपने प्रति देखता है, उतना ही दुःखी होता है और अपना मन मलिन करता है। इससे यह क्यों न लें कि वास्तव में दूसरे को दोष न देकर, क्षमा करके वह क्षमा तो अपने को ही करता है। स्वयं ही दुःखी होने से बच जाता है।

इसी तरह राम जी के और भी गुण देखते देखते जब उन्हें अपने जीवन में उतारने लगेंगे, तब ही साधना शुरू होगी- यही वास्तविक पूजा है। ❖

सत्-असत् विवेक

पिता जी - सत् क्या है और असत् क्या है? हम सत्य माँगते हैं पर यह नहीं जानते कि यह माँग कर क्या माँगते हैं? असत् क्या है जिसे छोड़ना है.. और असत् से उठ कर सत् की ओर कैसे जाना हो?

सारांश - इस पल जो है वह सत् है। वास्तविकता सत् है। मिथ्यात्व में सत् का आभास असत् है। संग, मोह, अहं और मनोरुचि जनित मान्यता से रंगे हुए, हम किसी भी जीव या वस्तु में अपने जो भाव भरते हैं, वह असत् हैं। किसी में कभी कोई एक अरुचिकर गुण देख लिया, फिर उसे पूर्णरूप से बुरा मानकर जो भी कहोगे या करोगे वह असत् होगा। एक पहलू में जो बुरा है, अनेक पहलुओं में अच्छा हो सकता है।

प्रश्न अर्पण

सत् है क्या राम कहो, असत् किसको कहते हैं।
यह भी बात हम न जानें, सत् याचक हम बैठे हैं।।1।।

सत् माँगें पर समझें न, असत् है क्या जो त्याग दें।
असत् त्यजी कस सत् पायें, जब इतना भी न जान सकें।।2।।

तत्व ज्ञान

वस्तुत: जो विद्यमान हो, केवल हक़ीक़त सत्य है।
मूल तत्व जीवन शक्ति, निरपेक्ष सत्ता सत्य है।।3।।

नित्य को तुम सत्य कहो, वास्तविक अस्तित्व सत्य है।
जो है नहीं पर 'है' सा लगे, वह ही तो असत्य है।।4।।

असत् सत् सा भासित होये, व्यर्थ अर्थ दे अर्थ को।
वास्तविकता को झूठ कहे, वहाँ भरी के मिथ्या अर्थ को।।5।।

जो दृढ़ रहे शाश्वत है जो, अविछिन्न रूप अखण्ड हो।
वास्तविक अस्तित्व तत्व रूप, को साधक तुम सत्त्व कहो।।6।।

अस्तित्वहीन सत्ता रहित को, सत् कहना असत् ही हो।
जो है उसे न मान करी, जो नहीं उसे तुम सत्य कहो।।7।।

'मैं' असत् पर सत् भासे, कर्तृत्व भाव भी उठी आये।
कर्तापन असत् ही है, असत् में सत् सा दर्शाये।।8।।

मान्यता कहें असत् ही हो, या सत् है या असत् वह हो।
सत् की मान्यता कोई नहीं, मान्यता बस असत् ही हो।।9।।

मनो प्रवाह असत् रमणी, असत् है पर वह है तो है।
आशा तृष्णा निरर्थक जो, बहु चेष्टा असत् ही है।।10।।

'मैं' मेरा और संग मोह, सत् से सब दर्शाते हैं।
इस कारण ही मूर्ख मन, असत् में ही भरमाते हैं।।11।।

व्यक्तित्व 'मैं' का है नहीं, पर पूर्ण जग में रमा रहे।
इस कारण पूर्ण जग को, यह मूर्ख मन सत्य कहे।।12।।

जीव भी है प्रकृति भी है, ब्रह्म भी है चाहे कह लो।
'मैं' ही असत् है दुनिया में, इसको क्यों न समझ सको।।13।।

इन त्रै में कोई भेद नहीं, पूर्ण में पूर्ण ही हो।
असत्पूर्ण छलिया 'मैं' के, कपट से यह विच्छेदन हो।।14।।

ब्रह्म स्वभाव है अध्यात्म, अखण्ड सत्त्व को जान लो।
वही प्रेम वही न्याय हो, नितांत अहं अभाव जो हो।।15।।

जन्म जन्म में ब्रह्म जन्म, जीव रूप में जब हुआ।
असत् में रहे असत् दीखे, सत् विचलित पर नहीं हुआ।।16।।

निज गुण वह न छोड़ सकें, जस आये वस रूप धरें।
असत् भी सत् जिसको माने, उसको सत् वह ही कर दें।।17।।

ज्ञान-विज्ञान सहित

माँग स्थिति की नहीं करो, स्वरूप की माँग तुम करो।
स्थिति पे ध्यान लगाते हो, वर्तन विधि न देख सको।।18।।

राम की स्थिति तो प्रिय लगे, स्वरूप जीवन में है बसा।
करुणापूर्ण स्थिति यह है, जीवन करुणापूर्ण भया।।19।।

क्षमा स्वरूप वा स्थिति है, क्षमामय जीवन उनका था।
क्योंकर गुण जग में वरता, रूप तो उनका देख ज़रा।।20।।

ब्रह्म के गुण तुम नित गाओ, गुण योग तुम नहीं करो।
ब्रह्म हृदय में तब आयें, गर वा गुण तुम बहा सको।।21।।

गर प्रेम तुझे करना है, वा का प्रेम तुम देख लो।
प्रेम का स्वरूप है क्या, निज रूप में ला के देख लो।।22।।

वास्तविकता जो तेरी है, वा की सत्यता देख लो।
'जो है' माने 'वह वहाँ नहीं', निजी असत्यता देख लो।।23।।

मान्यता बधित है मन तेरा, मोह संग पूर्ण है यह।
अपने को ही सत्य कहे, सत् कैसे वह देख सके।।24।।

निज बुद्धि को महा श्रेष्ठ, न्यायाधीश मन समझे है।
बुद्धि का जहाँ कण नहीं, उसे भगवान ही समझे है।।25।।

बिन सोचे विचार किये, दूजे की बात भी बिन सुने।
एक की सुन के निर्णय दे, फिर कहे जग मेरी सुने।।26।।

निर्णायात्मिका शक्ति वह, बुद्धि वहाँ पे थी ही नहीं।
सत् है क्या उस सत् की, तलाश भी तूने करी नहीं।।27।।

असत् बुद्धि है जान लो, बुद्धि तो भासित होती है।
निर्णयात्मिका शक्ति नहीं, पर प्रतीत वहाँ होती है।।28।।

सत् कस जान यह पायेगी, निर्मल इसको प्रथम करो।
स्थित प्रज्ञ जिसे कहते हैं, स्थित बुद्धि तो वह ही हो।।29।।

दैवी गुण जो कहीं कहे, सम्पूर्ण निज में माने हो ।
विपरीतता में फिर सोच लो, तड़प करी क्यों भड़क पड़ो।।30।।

गर सच ही क्षमा तुझमें होती, विपरीत जब कोई कह देता।
क्षमा करी के इक पल में, तू सब कुछ ही सह लेता।।31।।

जो बीत गया मन भूले न, वह ही आज भी राज्य करे।
भूत ही जिस पे राज्य करे, हक़ीक़त कैसे देख सके।।32।।

परम स्वरूप पे ध्यान लगे, वा गुण से तेरा प्रेम भये।
गुण के ही तब गुण गाये, गुण स्वरूप तू समझ सके।।33।।

गर वह गुण तुझमें न आयें, जानो तुम सत् न जानो।
न बोल सको न देख सको, क्योंकर उसको पहचानो।।34।।

असत् बुद्धि निजी असत्, को ही जब हेरन् चले।
राम स्वरूप सम्मुख धरे, जीवन अनुरूप ही वह चाहे।।35।।

शनैः शनैः असत् बुद्धि, सत् की ओर बढ़ जायेगी।
असत् सों असत् मिटा करी, स्थितप्रज्ञता पायेगी।।36।।

विवेक तब ही उभरे है, वा स्वरूप गर तुम चाहो।
जीवन में वही बनना चाहो, तुम सत् तभी समझ पाओ।।37।।

असत् स्वरूप तो कह दिया, जो भी कही के आये हैं।
इनसे जो हो जायें परे, वह सत् में ही समाये हैं।।38।।

ज्ञान की राही असत् का, अँधियारा ही मिटाना है।
ज्ञान को ज्ञान मिटाये फिर, शेष परम ही ठिकाना है।।39।।

सहज स्थिति ही योग कहें, राम से संग है योग कहो।
दुःख संयोग वियोग ही, मन जानो बस योग हो।।40।।

राम है सत् और सत् आनंद, आनंद स्वरूप तुम बन सको।
राम स्वरूप जो अपनाओ, सत् स्थित तब हो सको।।41।।

विपरीतता में भी जब रहे, विचलित मन नहीं हो सके।
मन जब लौ तेरा संग रहे, योग स्थित नहीं हो सके।

तप से योग श्रेष्ठ कहें, ज्ञान से योग श्रेष्ठ है।
कर्म से योग श्रेष्ठ है, योगी परम ही श्रेष्ठ है।।43।।

एकरूप हुए राम से, पूर्णता में गर अपनाया।
सुख दुःख में सम हो जायें, जीवन में गर अपनाया।।44।।

ज्ञान से अज्ञान मिटे, ज्ञान भी तब नहीं रहे।
ज्ञान प्रमाण तू ख़ुद भये, जो कहे विज्ञान भये।।45।।

24.10.1966

उपासना राही शास्त्रों में खोज

डॉ. जे. के. महता

गीता में भगवान ने कहा हैः

न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते।
त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः।।

श्रीमद्भगवद्गीता- 18/10

अर्थात् : *जो मनुष्य अकुशल कर्म से द्वेष नहीं करता और कुशल कर्म में आसक्त नहीं होता, वह शुद्ध सत्त्व गुण से युक्त पुरुष संशय रहित बुद्धिमान और सच्चा त्यागी है।*

श्रीमदभगवद्गीता का अध्ययन और चिन्तन मेरे जीवन का अभिन्न अंग था, परन्तु रुचि सदा अनुकूलता में रही। प्रतिकूलता के प्रति मन में द्वेष नित्य भरा रहता। अनेकों संत महात्माओं और ज्ञानी जन.. जिन्हें मुझे मिलने का सौभाग्य मिला, उन में भी रुचि और अरुचि की प्रधानता ही देखी। अपने में और अन्य लोगों में, जो शास्त्रों को पढ़ते हैं और मानते हैं, इस श्लोक और शास्त्रों के ऐसे अन्य कई श्लोकों के अर्थ का जीवन में अभाव देख कर मैं समझता था कि शास्त्र केवल कवियों की विनोद अर्थ मनो कल्पना हैं.. ये जीवन में धारण करने के लिये नहीं हैं।

पूज्य माँ के सम्पर्क में आने से पहले शास्त्रों पर संशय का यह आक्षेप बना ही रहता था। दूसरा संशय यह उठता था कि भगवान का वाक् तो एक ही है परन्तु भिन्न भिन्न ज्ञानियों ने उसके अर्थ अलग अलग निकाले हैं। एक ही शास्त्र की अनेकों टिप्पणियाँ हैं, जो एक दूसरे से मेल नहीं खातीं। यही कारण है, अलग अलग सम्प्रदायों और धर्मों का.. और संसार में इन मतभेदों के कारण झगड़ों का।

ऐसे ही शास्त्रों के वाक् के प्रति श्रद्धा के अभाव के कारण मेरे जीवन में उनका कोई विशेष महत्त्व नहीं था। शास्त्र, जो हमारे देश की एक अमूल्य निधि हैं, जो परम्परा से जीने का ढंग सिखा रहे हैं, मेरे लिये केवल बातें करने के लिये और गुमान भरने के लिये ही रह गये थे। आज से 40 वर्ष पहले अपने में और आस पास अपने समाज में गीता कथित मूल्यों का अभाव देखकर और शास्त्रों की चर्चा केवल अपने आपको ठीक और श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिये ही करता हुआ देख कर, मेरे मन में शास्त्रों के वाक् पर ही संशय होने लगा था।

जब परम पूज्य माँ से मेरा पहला सम्पर्क हुआ.. पहली ही घटना ने मुझे अपनी ओर आकर्षित किया। मैंने देखा कि वह अपने आपको पूर्णरूपेण भूल कर, अपने पर होते हुए दूसरे के प्रहारों पर ध्यान न देकर, उसके तदरूप उसके सुख और हित अर्थ उसकी सेवा में लगे हुए थे। उस समय यह पंजाब यूनिवर्सिटी में उच्च पद पर आसीन थे। देखने में यह एक साधारण सा जीवन व्यतीत कर रहे थे.. यह संत हैं या ज्ञानी हैं, ऐसा कोई भी तो बाह्य चिन्ह नहीं था इनके जीवन में!

उस प्रथम सम्पर्क के पाँच साल बाद तक मुझे इन्हें दिनचर्या में, अपने और पराये, सबके साथ व्यवहार करते हुए देखने का मौका मिला। साथ साथ इनका गीता का अध्ययन भी आरम्भ हो गया। पूज्य माँ ने गीता अर्थात् साक्षात् भगवान के मुख से निकले हुए वाक् को उपदेश न मान कर, उनका आदेश माना। अपने जीवन को उस वाक् के अनुसार तत्काल ढालना ही इनका केवलमात्र धर्म बन गया। इस लग्न के परिणामस्वरूप इनके मुख राही प्रवाहित अभंग प्रवाह.. एक अनुभवी का भक्तिपूर्ण ज्ञान बन कर प्रकट हुआ। गीता के बाद एक एक करके नौ मुख्य उपनिषद् इनके मुख से बह गये और इनकी जीवनधारा देखते देखते बदल गई। थोड़े से लोग, जो इनके इस अद्भुत दिव्य जीवन में शास्त्रों की राही परिवर्तन होते देख रहे थे, मन्त्रमुग्ध हुए वे इनकी ओर बड़ी तीव्र गति से आकर्षित होने लगे।

पाँच वर्ष तक एक अति साधारण जीवन में इनका यह दिव्य दर्शन पाकर, शास्त्र की सत्यता के प्रति उठते हुए मेरे सब ही संशय दूर हो गये। गीता कथित दान, तप और यज्ञमय इनका जीवन मुझे गीता की सजीव सप्राण प्रतिमा लगा। शास्त्रों को सही ढंग से अपने जीवन में उतारने के लिये, मैं अपने परिवार सहित शेष जीवन इनके साथ ही रहने के निश्चय से, इनकी शरण में चला आया।

जिन्होंने पूज्य माँ के मुखारविन्द से उस पल बह रहे शास्त्रों के ज्ञान को लेखनीबद्ध किया था और जिन्हें आज हम आदरणीय छोटे माँ कहते हैं, वह भी इनके साथ इसी अभिप्राय से हो लिये कि इस ज्ञान को जीवन में कैसे धारण करें। हमारा यह छोटा सा परिवार यानि माँ का परिवार- यही 35 वर्ष पहले अर्पणा परिवार की नींव थी।

तब से लेकर धीरे धीरे यह परिवार बढ़ता ही गया है। आज कई छोटे छोटे परिवार मिल कर यहाँ एक परिवार ही बनकर रहते हैं। इस परिवार के प्रायः 60 सदस्य हैं। इसमें बच्चे, बूढ़े, स्त्री, पुरुष भिन्न भिन्न प्रान्तों और देशों से और भिन्न भिन्न धर्मों के लोग हैं। यह सब माँ की छत्रछाया में एक कुल बन कर रहते हैं। हिन्दू, सिख, ईसाई, मुसलमान, सब अपने अपने धर्मों में पूज्य माँ से सत्यता जानने

और उसे जीवन में ढालने के लिये और उस सत्य के लिये, इस अर्पणा कुल के घुले-मिले सदस्य बनकर रहते हैं।

जहाँ आजकल के युग में एक छोटे से परिवार का मिलजुल कर रहना मुश्किल हो रहा है और इस कारण घर घर में कलह-क्लेश, समाज का भिन्न भिन्न टुकड़ियों में बँट जाना, सम्प्रदायों की आपस में झड़पें, अमीर-ग़रीब, ऊँच-नीच का भेदभाव और परस्पर एक दूसरे का दुरुपयोग, एक प्रचलित जीने का ढंग बना हुआ है। वहाँ आज इन सब भेदों से रहित होकर एकजुट बना हुआ अर्पणा परिवार समाज के पिछड़े हुए वर्गों की सेवा करना अपना अहोभाग्य मानता है। यह सेवाएँ नित्य विस्तार को पा रही हैं। यह सब पूज्य माँ के द्वारा अपने जीवन में प्रमाणित हर धर्म के शास्त्रों के ज्ञान को जीवन में लागू करने का ही प्रसाद है।

पूज्य माँ कहते हैं, "सब ही धर्म मेरे हैं और उनके अवतारी पुरुष एक ही भगवान के अवतार हैं। भेद इतना ही है कि किसी ने उन्हें भगवान का पुत्र कहा, किसी ने पैगम्बर और किसी ने अवतार!" भगवान ने गीता में कहा है-

यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।

परित्राणआय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे।।

श्रीमद्भगवद्गीता- 14/7,8

अर्थात् : *निःसंदेह जब जब धर्म की ग्लानि होती है और अधर्म की वृद्धि होती है, तब तब मैं प्रकट होता हूँ। साधु के उद्धार के लिये, दुष्ट कर्म करने वालों के मिटाव के लिये तथा धर्म की स्थापना करने के लिये, मैं युग युगान्तर में जन्म लेता हूँ।*

पूज्य माँ ने भगवान के इस वाक् को अपने जीवन में धारण किया और हम सब को यह ही मानने की प्रेरणा देते हैं। वह कहते हैं कि भगवान तो एक हैं। हर धर्म के भगवान अलग अलग नहीं हो सकते। जिन मेरे भगवान ने कृष्ण का नाम पाया और माता देवकी के गर्भ से एक साधारण इनसान बन कर जन्में, उन्हीं मेरे भगवान ने ईशू मसीह का नाम पाया और माता मेरी के गर्भ से जन्म पाया। वह ही मुहम्मद बन कर आये और वही नानक बन कर इस जग में सत् पथ पर चलने वाले साधुओं को अपने जीवन के प्रमाण से पथ दर्शाने के लिये बार बार धरती पर आये।

हर युग फ़र्क़ था.. भाषा फ़र्क़ थी.. सभ्यता और रहन सहन के ढंग अलग अलग थे.. उस सबके अनुसार ही उन्होंने उपदेश दिया! मानवता ही मनुष्य का धर्म है, जिससे पतन ही अधर्म का वर्धन करता है। सत् पथ पर चलने वाले साधु भी इस पतन से प्रभावित हो जाते हैं और पथ पर न टिक पाने के कारण घबरा जाते हैं। उनको अपने जीवन के प्रमाण राही सत् पथ दर्शाने और बल प्रदान करने के लिये ही भगवान बार बार जन्म लेते हैं।

उनकी भाषा और रहन सहन उस युग के अनुकूल ही साधारण होती है, परन्तु उनके कर्म और उनके पीछे उनका दृष्टिकोण विलक्षण होता है.. ताकि उस युग के लोग उन्हें अपने जैसा देखते हुए, उन में प्रेम, करुणा, क्षमा इत्यादि दैवी गुणों की विलक्षणता देख सकें और उनका अनुसरण करते हुए सच्चे मानव बन सकें। इन सब ही अवतारी पुरुषों में भगवान के यह परम गुण एक ही होते हैं। इस कारण भगवान एक ही हैं।

पूज्य माँ ने अपनी शरण में आये हुए सब साधकों को अपना ही शिशु मानते हुए यह दर्शाया है कि पूर्ण विश्व की युग युग में प्रकट हुई इन विभूतियों को पाकर मानव जाति आज अपनी इस सम्पदा के कारण कितनी धनवान है! इसका अनुभव हमें तभी हो सकता है यदि हम इन मूल्यों को अपने जीवन में साधारण तरीके से जीते हुए उतारें।

हर धर्म का शास्त्र, चाहे वह गीता है, कुरान है, बाईबल है या गुरु ग्रंथ साहिब है, उस धर्म के अवतारी पुरुष के जीवन से प्रमाणित, उसके मुख से बहा हुआ ज्ञान है। यह हक़ीक़त में उसकी वाङ्मय प्रतिमा के रूप में आज हमें प्राप्त है। पूज्य माँ कहते हैं, किसी भी शास्त्र का सही अर्थ समझने के लिये उसके रचयिता के जीवन पर ध्यान धरना पड़ेगा। यदि उसे अपने जीवन में धारण करने के लिये वहाँ से प्रेरणा और बल पाकर हम उसका अनुसरण करें, तो उसका सच्चा अनुभव मिलता है।

पूज्य माँ के जीवन में इसका प्रमाण और उनके ज्ञान प्रवाह में उनका अपना अनुभव, आज अर्पणा के पास निधि के रूप में अनेकों लिखे गये ग्रन्थों, ऑडियो एवं वीडियो कैसेट के रूप में प्राप्त है।

अर्पणा परिवार जीवन में धर्म का अनुसरण करते हुए जी रहा है। आज इस सम्पदा को प्रमाणित रूप में मानता हुआ, यह भिन्न भिन्न धर्मों के सदस्यों का एक समुदाय, संसार के साथ इस सम्पदा को बाँटना अपना कर्तव्य मानता है।

परम पूज्य माँ के आन्तर से, किसी भी धर्म के शास्त्र के किसी भी वाक् के प्रतिरूप में उसकी व्याख्या अर्थ जो भी वाक् बहता है वह एक अनुभवी का वाक् है। माँ ने जिस भी अवतारी पुरुष अथवा भगवान के भक्त का वाक् पढ़ा या सुना.. उन्होंने उसके जीवन पर ध्यान लगाकर पहले उनके वाक् और जीवन की तुलना करी। उनका जीवन ही उस वाक् की व्याख्या है, यह जाना। फिर उसमें श्रद्धा और प्रेम रख कर अपने जीवन में अभ्यास के द्वारा उसका अनुभव पाया।

भगवान कृष्ण ने गीता में कहा :

'कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः' श्रीमद्भगवद्गीता- 2/51

यानि- *मुनि जन फल की इच्छा को त्यागकर निष्काम कर्म करते हुए आन्तर में वह बुद्धि पाते हैं जो सत् के साथ युक्त कर देती है।*

पूज्य माँ ने भगवान के वाक् को हमेशा उपदेश नहीं, आदेश माना और उनके जीवन के साक्षित्व में उनके आदेश का पालन किया। इस प्रकार जीवन में भगवान के वाक् का अनुसरण करके वह शास्त्र के ज्ञान का अनुभव कर सके। इस कारण माँ का ज्ञान अनुभवी का ज्ञान है और अन्य शास्त्रों की व्याख्या से हमें विलक्षण लगता है। जीवन में उस ज्ञान का अनुसरण करने से इसकी सत्यता भी सिद्ध होती है।

भगवान कृष्ण ने गीता में दैवी गुणों की बात कही है। इन दैवी गुणों का उपार्जन हर साधक का लक्ष्य है। इन दैवी गुणों को भगवान के जीवन को सामने रख कर समझना अनिवार्य है। अहिंसा का गुण ही लें! वह स्वयं आप अहिंसा की प्रतिमा होते हुए अर्जुन को प्रेरित कर रहे हैं कि वह शस्त्र उठा कर युद्ध करे और अपने क्षत्रिय धर्म का पालन करे.. चाहे इसमें उसे अपने पूज्य पितामह और गुरु द्रोण का ही वध क्यों न करना पड़े। स्वयं भी उन्होंने अपने मामा कंस का और अपनी मासी के बेटे शिशुपाल का वध किया था।

यह कर्म तो देखने में अहिंसा के विपरीत लगते हैं। भगवान तो स्वयं अहिंसा की प्रतिमा हैं। उनके जीवन राही अहिंसा का अर्थ पूज्य माँ ने बताया कि सत्य का, न्याय का हनन ही हिंसा है। उसके रक्षण अर्थ चाहे अत्याचारी के प्राण भी लेने पड़ें तो अपने प्राणों की बाज़ी लगा कर उसका पालन करना दैवी गुण अहिंसा ही है।

पूज्य माँ का अपना जीवन इस अहिंसा के पालन का प्रमाण है। दूसरों पर अत्याचार होते देख कर हम दुष्टों से उनको न बचायें और वहाँ अहिंसा की आड़ लें तो यह तो वास्तव में हिंसा है। ❖

परम पूज्य माँ

अर्पणा
समाचार पत्र

अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन,
करनाल, हरियाणा
जून 2024

अविस्मरणीय आनंदमय स्मरणोत्सव.. गुरु उत्सव

प्रेम व एकत्व की भावना के साथ, अपने जीवन में परम पूज्य माँ की निरन्तर दिव्य उपस्थिति का आभास लिये परम पूज्य माँ के शिशु.. साधक गण एवं भक्त, अर्पणा परिवार के सदस्य एवं अभिन्न मित्र, 16-17 अप्रैल को उनके समाधि स्थल 'आशीर्वाद' के उद्घाटन के लिए एकत्रित हुए..

भगवान के नाम एवं वैदिक मंत्रों के उच्चारण के साथ दिव्य शोभा यात्रा आरम्भ की गई.. पुष्प वर्षा के साथ, परम पूज्य माँ के 'अस्थि कलश' को समाधि मंदिर में स्थापित किया गया।

'राम दरबार' प्राण प्रतिष्ठा

परम पूज्य माँ की अपने इष्ट श्री राम जी की भक्ति से प्रेरित हो कर, भगवान राम के दरबार में नतमस्तक हुए भक्तों में राम जी के जीवन, वचनों और प्रेम के प्रति पुनः भक्ति और कृतज्ञता का संचार हुआ।

भक्ति भजनों द्वारा गुरु उत्सव का समापन

16 व 17 अप्रैल को, श्रीमती विनीता गुप्ता और 'उर्वशी ललित कला अकादमी' द्वारा परम पूज्य माँ के उर्वशी भजनों के दिव्य शब्दों से आनंदमय भक्ति का रसपान करके सभी श्रोता झूम उठे।

अर्पणा अस्पताल

आपातकालीन देखभाल कक्ष की क्षमता में वृद्धि

आपातकालीन मामलों की बढ़ती संख्या को देखते हुए अर्पणा अस्पताल ने अपने कैजुअल्टी यूनिट को 4 बैड से बढ़ाकर 10 बैड का कर दिया है। इससे प्रतीक्षा समय कम होगा और आपातकालीन सेवाओं की गुणवत्ता में भी सुधार होगा.. जिससे अब तत्काल ज़रूरत वाले रोगियों को जल्द और ज़्यादा कुशल चिकित्सा सुविधा मिल सकेगी।

सर्वाइकल कैंसर पर कार्यशाला

अर्पणा अस्पताल की स्त्री रोग विशेषज्ञ, डॉ. अनुराधा महाजन, एमबीबीएस, डीएनबी ने 8 अप्रैल को 26 स्वयं सहायता समूह की महिलाओं (प्रशिक्षकों और स्वास्थ्य स्वयंसेवकों) के लिए सर्वाइकल कैंसर पर कार्यशाला आयोजित की, जिसमें 9 से 14 वर्ष की लड़कियों के लिए रोग के लक्षण, रोकथाम और टीकाकरण के महत्व को शामिल किया गया। टीकाकरण की आवश्यकता, उपलब्धता और लागत के बारे में भी विस्तृत जानकारी दी गई।

हरियाणा में दूरदराज़ तक पहुँची चिकित्सा सेवाएँ

वंचित क्षेत्रों के नेत्र रोगियों के लिए नई उम्मीद

वंचित क्षेत्रों के नेत्र रोगियों की सेवाओं में वृद्धि के लिए मई में कुछ उदार दाताओं ने 25 सीटों वाली एक बस उपलब्ध करवाई। यह बस सुविधाजनक और निःशुल्क परिवहन प्रदान करते हुए वंचित क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच में एक बड़ी बाधा को दूर करती है, जिससे अधिक रोगियों को आवश्यक अस्पताल उपचार प्राप्त करने में मदद मिलती है।

अर्पणा अस्पताल के कार्यक्रमों को समर्थन प्रदान करने के लिए, मैसर्स डायमंड इंटरनेशनल आईनेक्स प्राइवेट लिमिटेड (गुरुग्राम), महानिदेशक, स्वास्थ्य सेवाएं (हरियाणा) और एम.एल. नंदा चैरिटेबल ट्रस्ट (नई दिल्ली) के हम बहुत आभारी हैं।

हरियाणा सशक्तिकरण कार्यक्रम

दिव्यांगों के लिए मतदान के अधिकार को बढ़ावा देना

6 अप्रैल को, बड़ागाँव में, दिव्यांगों के लिए मतदान के अधिकार को बढ़ावा देने के लिए एक शिविर का आयोजन किया गया। इसमें 7 गाँवों के 125 दिव्यांग व्यक्तियों ने भाग लिया। ज़िला निर्वाचन अधिकारी ने मतदान के महत्व पर बल दिया और विशेष मतदान की प्रक्रिया के विषय में विस्तार से बताया। अर्पणा के डीपीओ श्री नरेश ने इस प्रणाली का समर्थन करने के लिये प्रतिबद्धता जताई।

अप्रैल-मई 2024 में स्वयं सहायता समूहों की गतिविधियाँ

- ऑडिट टीम, 11 अर्पणा फील्ड स्टाफ और 6 प्रशिक्षकों के साथ कार्यशाला की गई।
- स्वयं सहायता समूह (एसएचजी) के लिए ज़ूम मीटिंग के विषय में 3 कार्यशालाएँ।

- 1,015 एसएचजी की अप्रैल में मासिक बैठकें।
- मलेरिया और डेंगू की रोकथाम के लिए कार्यशाला।
- दो दिवसीय नेतृत्व प्रशिक्षण।
- एसएचजी का आंतरिक मूल्यांकन।
- दो एसएचजी संघों की कार्यकारी बैठकें।
- दिव्यांग व्यक्तियों की मासिक बैठकें।
- दिव्यांग संघ की कार्यकारी बैठक 29 अप्रैल को।
- स्वयं सहायता समूह की महिलाओं के सामने आने वाली बैंक समस्याओं के समाधान के लिए 5 टीमों के साथ संपर्क यात्रा।

हरियाणा में विकास कार्यक्रमों के लिए नई दिल्ली के उदार दाताओं श्री रविन्द्र बहल, श्री नीरज किशन कौल और बैज नाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट का हार्दिक आभार!

दिल्ली कार्यक्रम

कक्षा 10वीं और 12वीं सीबीएसई बोर्ड परिणाम, 2024. सभी के सभी उत्तीर्ण हुए!

अर्पणा के 31 छात्र कक्षा 12 की बोर्ड परीक्षा में शामिल हुए –
करीना 83% से प्रथम स्थान, काजल 82% से दूसरे स्थान, कोमल 80.2% से तीसरे स्थान पर रहीं।
अर्पणा के 43 छात्र कक्षा 10 की बोर्ड परीक्षा में शामिल हुए –
आशी 82.4% से प्रथम स्थान, अनुष्का 82.2% से दूसरे स्थान, काजल 82% से तीसरे स्थान पर रहीं।

अर्पणा, श्री सुरेश मोतीराम शिवदासानी (ओमान), केयरिंग हैंड फॉर चिल्ड्रन (यूएसए), अवीवा (यूके), आईडीआरएफ (यूएसए), बैज नाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट, एवं अर्पणा ग्वेर्नसे (यूके) के प्रति बहुत आभारी है, जिन्होंने अर्पणा के शिक्षा कार्यक्रमों में समर्थन दिया।

हिमाचल प्रदेश कार्यक्रम

हिमाचल को हरा-भरा बनाया - 70,000 फलदार एवं पशु आहार वृक्ष लगाए गए!

पिछले वर्ष 40 गाँवों में 65,489 पशु आहार वृक्ष लगाए गए, जिसमें 67 स्वयं सहायता समूहों के 360 सदस्यों ने भाग लिया। हाल ही में, बारिश शुरू होने के बाद, 4,306 फलदार वृक्ष भी लगाए गए!

फोटो व्यवसाय से परिवार में खुशियाँ आईं

डलहौज़ी में अर्पणा के स्वयं सहायता समूह की एक सदस्य अनु ने अपने बेटे के लिए टेलीस्कोप कैमरा खरीदने के लिए 30,000 रुपये का माइक्रो-क्रेडिट ऋण लिया। अब वह खजियार रोड से दिखाई देने वाले मणिमहेश कैलाश शिखर की तस्वीरें पर्यटकों को बेचकर 11,000 रुपये प्रति माह तक कमा लेता है। यह इस क्षेत्र में इस प्रकार की नई पहल है।

अर्पणा, बैज नाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट (नई दिल्ली) एवं रविन्द्र बहल, (नई दिल्ली) का इन कार्यक्रमों के समर्थन के लिए बहुत आभारी है।

EMPOWER VULNERABLE WOMEN AND CHILDREN AS THEY REACH FOR THEIR DREAMS!

ARPANA TRUST

EDUCATION FOR DISADVANTAGED CHILDREN

- Tuition support for classes 1-12 pre-school Classes for toddlers, cultural activities.
- Vocational training classes.

DONATE ONLINE

HUMANE VALUES FOR AN EQUITABLE SOCIETY

- Dramas, Publication, Satsangs
- Charitable grants for the vulnerable
- Health/Socio economic assistance

ARPANA RESEARCH & CHARITIES TRUST

PROVIDES MODERN HEALTH CARE THROUGH

- Arpana Hospital for free /affordable health care.
- Arpana Medical centre, Himachal

DONATE ONLINE

EMPOWERING WOMEN

- Self Help Group & SHG Federations.
- Micro – Credit, Income generation, community development

EMPOWERING THE DIFFERENTLY ABLED

- Differently Abled Persons Organizations for health, assistive devices, certifications and income generation.

DONATIONS TO ARPANA ARE 50% TAX EXEMPT UNDER SECTION 80G, INCOME TAX ACT 1961

Cheques in favour of Arpana Trust to be sent to:
Information & Resources Department
Arpana, Madhuban, Karnal- 132037, Haryana
Email: arct@arpana.org | at@arpana.org

Donations through Direct Bank Remittance:
Bank of India, Karnal (IFSC Code: BKID0006750)
Arpana Research & Charities Trust; Bank Account No. 675010100100014,
Arpana Trust Bank Account No. 675010100100001

FOREIGN DONATIONS TO ARPANA TRUST ARE 100% TAX EXEMPT WHEN SENT THROUGH:

Arpana Canada
Mrs. Sue Bhanot, 7 Scarlett Drive, Brampton,
Ontario L6Y 3S9 Canada
Email: suebhanot@rogers.com

India Development & Relief Fund (IDRF)
Mr. Vinod Prakash, President, IDRF, 5821 Mossrock Drive,
North Bethesda, MD 20852 USA
E mail: vinod@idrf.org

Contact Us: Harishwar Dayal, Executive Director +91 98186 00644
Aruna Dayal, Director Development +91 99916 87310
Email us: arct@arpana.org | at@arpana.org
Websites www.arpana.org www.arpanaservices.org

परम पूज्य माँ की स्मृति में निर्मित समाधि स्थल..

'आशीर्वाद' की कुछ झलकियाँ

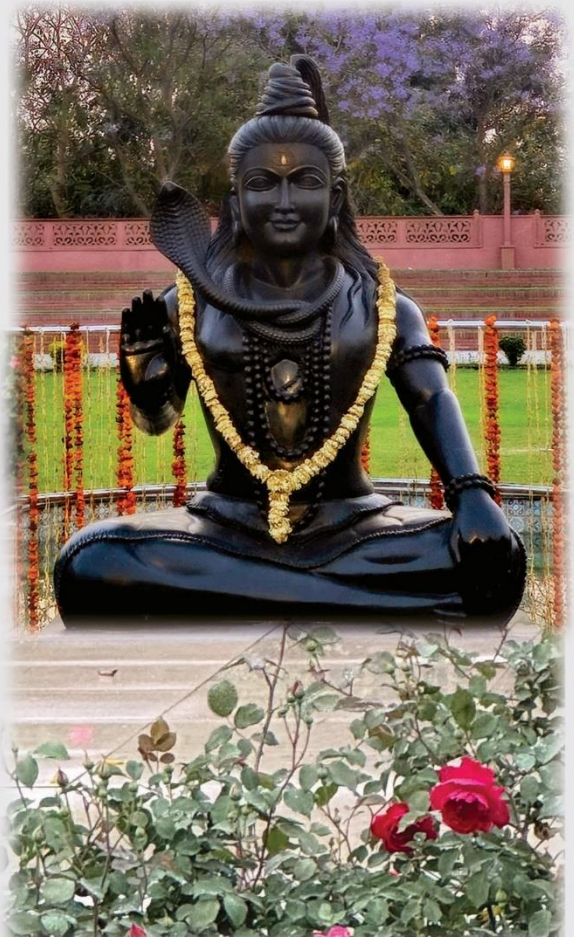

"उत्पत्ति उससों पाकर,
लीन वहीं हो जाते हैं.."

- परम पूज्य माँ

तदेतत्सत्यं यथा सुदीप्तात्पावकाद् विस्फुलिङ्गा: सहस्रश: प्रभवन्ते सरूपा:।
तथाक्षराद् विविधा: सोम्य भावा: प्रजायन्ते तत्र चैवापियन्ति।।

हे प्रिय! वह सत्य यह है;
जिस प्रकार प्रज्वलित अग्नि में से
उसी के समान रूपवाली हज़ारों
चिनगारियाँ नाना प्रकार से प्रकट होती हैं;
उसी प्रकार अविनाशी ब्रह्म से
नाना प्रकार के भाव उत्पन्न होते हैं
और उसी में विलीन हो जाते हैं।

मुण्डकोपनिषद् – 2/1/1

Published in June 2024 for Arpana Trust, Madhuban, Karnal Regd. No. RN 30710/77